श्री गीता-रामायण समन्वय

लेखक- स्वामी सुखराम दास जी

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ सं०
१—अर्थ पञ्चक ज्ञान	१–३
२—श्री गीतारामायण भगवत स्वरूप	४–५
३—श्री गीतारामायण की श्रेष्ठता	६
४— भक्त और भगवन्त की साम्यता	१०–१६
५— भावुक भक्तों में भावांकुर के लक्षण	१७–२०
६— पत्रं पुष्पं फलं तोयं पर चार भक्तों की कथा	२४–३०
७—अर्जुन विभीषण जी तथा भरत जी की षट्शरणागति का स्वरूप	४०–४२
८— श्री सीता स्तोत्रम्	४५–४६
९— श्री राम स्तोत्रम्	४७–४८
१०—श्री कृष्ण स्तोत्रम्	४९–५०

श्री वासुदेव शर्मा जी को सादर
समर्पित किया –

पूज्यपाद परम वीतरागी

सन्त श्री हरीदास जी बालोतरा

बालोतरा [राजस्थान]

ग्रन्थकार

रामायणी सुखरामदास जी [मानस मर्मज्ञ]

श्री मणिरामदास जी की छावनी, श्री अवधधाम

श्री सीतारामाभ्यां नमः

श्री हनुमते नमः

भूमिका

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।ईशा० १।।

यह पूर्ण है, वह पूर्ण है, पूर्ण में से पूर्ण निकलता है और पूर्ण का पूर्ण मिलकर पूर्ण ही शेष रहता है। इस उपनिषद के आधार से भगबान के सभी अवतार पूर्ण ही हैं। तथापि चरित्र के सामान्य एवं विशेष के कारण अंशावतार प्रवेशावतार कलावतार पूर्णावतार कहे जाते हैं। यथा–मीनावतार में भगवान शंखासुर को मारकर वेद को ले आये, बस इतना ही चरित्र करके अन्तर्धान हो गये। उसी प्रकार कच्छपावतार में भी भगवान ने समुद्र मंथन के समय मन्दराचल पर्वत को पीठ पर धारण कर समुद्र मन्थन के पश्चात अदृश्य हो गये। वाराहावतार में हिरन्याक्ष को मार कर पृथ्वी को पाताल से ऊपर लाये। नरसिंहावतार में हिरण्यकश्यप को मार कर भक्तराज श्री प्रहलाद जी की रक्षा की। परसुरामावतार में सहस्त्रबाहु की भुजाओं का क्षेदन करके २१ बार पृथ्वी को क्षत्रियों से होन किया। वामनावतार में बलि से पृथ्वी को दान मांग कर देवताओं को दे दिये। विस्तार चरित्र श्रीराम कृष्णावतार में ही है।

श्री रामावतार में चार चरित्र विशेष है यथा—

दशवर्ष सहस्त्राणि दशवर्ष शतानि च ।
रामोराज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति ।।

श्रीमद्बाल्मीकीय रामायण प्रथम सर्ग मूलरामायण और गीतावली रामायण में गोस्वामी श्रीतुलसी दास जी ने लिखा है कि सहस द्वादश पंचशत में कछुक है अब आउ ।। अर्थात् साढ़े १२ हजार वर्ष तक रहकर श्री राम जी अपने नित्य धाम पधारे । भगवान श्रीकृष्णचन्द्र जी धराधाम में १२० वर्ष कहीं १२५ वर्ष कहीं ६०० वर्ष तक रहना लिखा गया ।

दूसरी विशेषता यह है कि श्री राम जी अपनी सम्पूर्ण प्रजा को विमान बिठाकर अपने साथ नित्यधाम ले गये श्री पार्वतीजी ने आश्चर्य पूर्वक भगवान शंकरजी से पूँछा कि—

प्रजा सहित रघुबंशमणि किमि गवने निज धाम ।

भगवान श्री कृष्णचन्द्र जी के अभिन्न सखा श्री उद्धव जी गोलोक यात्रा के समय प्रार्थना किया कि प्रभो आपका वियोग हमें सहन नहीं होगा अतः कृपा करके आप मुझे अपने साथ लेते चलिये परन्तु भगवान ने कहा कि आप बद्रिकाश्रम में जाकर योगक्रिया द्वारा शरीर त्यागकर मुझको प्राप्त हो जाओगे ।

तीसरी विशेषता यह है कि श्री कृष्णचन्द्र जी की स्तुति किसी अवतार ने नहीं की है । ब्रह्मादि देवताओं ने ही स्तुति की है । श्री राम जी की स्तुति श्री परशुराम जी ने की है । यथा—

जय रघुवंश बनज बन भानू । से लेकर कहि जय जय जय रघुकुल केतू । भृगुपति गये बनहि तप हेतू ।।

चौथी विशेषता यह है कि भगवान श्री कृष्णचन्द्र जी की सुन्दरता पर गोपिकायें आदि मोहित हुईं । किसी पुरुष के मन में स्त्रीत्व की भावना नहीं हुई । किन्तु भगवान श्री राम जी के लिये श्री वेदव्यास जी ने लिखा है कि—

पुरा महर्षयः सर्वे दण्डकारण्य वासिनः ।
दृष्ट्वा रामं महात्मानं भोक्तुमैच्छन्सुविग्रहम् ।।

अर्थात दण्डक वन में रहने वाले महर्षियों ने जब श्रीराम जी की अनुपम छवि का दर्शन किया तो उनके मन में भावना होने लगी कि यदि यह श्री राम जी मुझे पति रूप में प्राप्त हो जायें । मैं इनकी पत्नी बन जाऊँ तो हम इनके सर्वाङ्ग के आलिंगन का भली भांति अनुभव कर सकते हैं । रूपौदार्य गुणैपुंसां दृष्टि चित्तापहारकम् । वाल्मी० रा० अ० कां० । इस प्रकार श्रीकृष्ण चरित्र की अपेक्षा श्री राम चरित्र में विशेषता है । तथापि उपरोक्त प्रमाणों से मैंने बराबर करके दिखलाया है । यदि किसी सन्त महापुरुष या भक्त को त्रुटि दीख पड़े तो मैं उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूँ ।

सुखरामदास रामायणी

श्री राम

दो शब्द

भगवान के गुण अनन्त हैं । हरि अनन्त हरिकथा अनन्ता । भगवान अनन्त कल्याण गुण गण निलय हैं । प्रभु के गुणों के परिज्ञान के लिये भारतीय वाङ्मय में दो महान ग्रन्थ हैं ।

श्रीमद्भगवद्गीता एवं श्रीमद्रामचरित मानस । भगवद-गीता उपनिषदों का सार सर्वस्व है "सर्वोपनिषदो गावो·······दुग्धं गीतामृतं महत्" । उसी प्रकार "नाना पुराण निगमागम सम्मतं" श्री राम चरित मानस है ।

भारत के ही नहीं । विश्व के सर्वमान्य विद्वानों ने दोनों ग्रन्थों पर भाष्य एवं टीकायें की हैं । दोनों ग्रन्थों के बहुत अंशों में साम्य है ।

श्री रामायणी सुखरामदास जी महाराज भजनानन्दी एवं श्री गोस्वामी जी के द्वादशों ग्रन्थों के साधिकार विद्वान हैं । आपने भगवद्गीता एवं श्रीमद्राम चरित मानस के समन्वय एवं साम्य का जो सत्प्रयास किया है सराहनीय है । इस गवेषणात्मक महान कार्य से लोकोपकार होगा ।

महान्त श्री नृत्य गोपाल दास जी

श्री रामोविजयतेतराम् ।

इदं खलु गीता मानस समन्वयात्मकं ग्रन्थं व्यलोकि । ग्रन्थेऽस्मिन विविध विषया: संवेशिता सन्ति । श्रीरामकृष्णयोः पारमर्थक साधकं मन्वानो ग्रन्थकारका: श्री सुखरामदास महात्मान: लौकिकं ग्रन्थस्य नापेक्षिता स्वर्णसौगन्धयोग सम्मेलिता: हिन्दी संस्कृतानुरागिणोऽनुभूता: सम्भविष्यन्ति इति ये सम्मति : माहात्मानो दीर्घायुर्भवान्त्वेति ।

—ब० गु० स्वामी श्री रामानन्दाचार्य:

—श्री शिवरामाचार्य: जी महाराज

॥ श्री ॥

रामायणी श्रीसुखरामदासजी ने भारत के सुप्रसिद्ध रामायणी श्री रामबालक दास जी महाराज से बड़े परिश्रम से रामचरित मानस का अध्ययन किया है।

गोस्वामी जी के ग्रन्थों की कथा बड़ी भावपूर्ण कहा करते हैं। रामायण की चौपाइयों का श्री गीता के श्लोकों से सामंजस्य स्थापित किया है। रामायण पर खोजपूर्ण गहरा अध्ययन का परिचायक यह है।

साथ ही अपने संस्कृत छन्दोंमें श्रीभगवत् स्तोत्रों का गायन किया है। कुछ दोष होने पर भी वह दोषावह नहीं है क्योंकि सर्वं सम्पूर्णतांयाति सद्यो वन्दे तमच्युतम् । के अनुसार मङ्गलमय है। भानित भदेस वस्तु भलिबरनी । रामकथा .... उन्हें पढ़ कर यथा शक्ति उन दोषों के मार्जन का मैंने प्रयास किया।

—पं श्री रामकुमार दास

ॐ नमः सीतारामाभ्यां

श्रद्धेय श्री रामायणी सुखरामदास जी महाराज की कृति पठनीय एवं मननीय है । आप श्री ने श्री गीता व रामायण की तुलनात्मक समालोचना अपने ग्रंथ में सुष्ठुरूपेण की है। फलतः इसे पढ़कर "रामं कृष्णं मयं जगत्" की एकता का स्पष्ट उदाहरण लोगों के मन से द्वैत-द्वेष के मल को दूर किये बिना न रहेगा ! पाठक की बुद्धि के आइने में परमात्मा के अखण्ड ज्ञानैक रूप का प्रतिबिम्ब झलकने लगेगा । अस्तु भगवत प्रेमी महानुभाव इस ग्रन्थ का अवलोकन करने की कृपा अवश्य करेंगे । आशा करता हूँ कि श्री रामायणी जी का सफल प्रयास भक्तों के मुख पंकज श्री को विकसित करने वाला सिद्ध होगा ।

—अनन्त श्री विभूषित पंचरसाचार्य
स्वामी श्री रामहर्षणदास जी महाराज

श्रीमते रामानन्दाय नमः

परमादरणीय रामायणी श्री सुखराम दास जी द्वारा श्री गीता रामायण समन्वय ग्रन्थ देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। श्री रामायणी जी ने गीता में प्रतिपादित शरणागति का मानस से तुलनात्मक विवेचन किया है। यह प्रशंसनीय है अर्थ पंचक का विवेचन दोनों ग्रन्थों से किया वह दर्शनीय है।

श्रीराम श्रीकृष्ण की भगवत्ता एवं दोनों का अभेद स्वरूप का मार्मिक बिवेचन किया है। श्रीरामोपासक तथा श्रीकृष्णोपासक दोनों के लिये यह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी है। इस ग्रन्थ से साम्प्रदायिक सद्भाव की स्थापना में सहायता मिलेगी। आज के युग में ऐसे ग्रन्थ की महती आवश्यकता है जो समस्त बैष्णव सम्प्रदाय को संगठित कर तथा परस्पर सौहार्द की वृद्धि में सहायक हो।

हम श्रीरामायणी जी को साधुवाद देते है।

—किलाधीश श्री सीताराम शरन जी महाराज

लक्ष्मण किला अयोध्या जी

श्री रामाय नमः

करुणा वरुणालय परम प्रभु श्री राघवेन्द्र रघुकुल तिलक ही एकमात्र अवलम्ब एवं प्राप्य हैं। शास्त्रों के माध्यम से भगवत् स्वरूप का ज्ञान होता है। वह भी उन्हीं की कृपा से होता है सभी शास्त्रों की व्याख्या भगवत् स्वरूप ज्ञानार्थ ही है। "सा विद्या या विमुक्तये" अतः जो भी पुरातन महर्षिकल्प एवं लेखक तथा आधुनिक ग्रन्थकार भगवान के चरित्र का प्रतिपादन किये हैं। उनका हम पर अकथनीय ऋण है। भगवान का भी प्राकट्य लोकशिक्षण के लिये ही होता है।

"मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्य शिक्षणम्"।

हमारे परम श्रद्धेय एवं परम साधु रामायणी श्री सुखराम दास जी महाराज ने अपने अथक परिश्रम से 'श्रीगीता-रामायण समन्वय" नामक ग्रन्थ की रचना करके समाज का उपकार किया है। जिसमें आपने गीता एवं रामायण के मुख्य-मुख्य स्थलों को अत्यन्त रोचक शोधपूर्ण तथा उपनिषदादि से उदाहृत ढंग से प्रस्तुत किया है और भी अन्य रहस्यों को जैसे अर्थ पञ्चकादि का बड़े ही सफल लेखनी में चित्रण किया है। जिससे सभी पाठकों को सन्तोष प्राप्त हो सकेगा। इति शुभम्।

—श्री देवराम दास जी महाराज वेदान्ती

श्री रामवल्लभा कुञ्ज, जानकी घाट

।। श्री मैथिली रमणो विजयते ।।

श्री हनुमते नमः

श्री मते रामानन्दाचार्याय नमः श्री सद्गुरवे नमः

परमश्रद्धेय रामायणी श्री सुखराम दास जी महाराज ने गीता रामायण समन्वय ग्रन्थ लिखकर समाज को महती वस्तु प्रदान की है। यह ग्रन्थ सभी श्री राम कृष्ण भक्तों को हितकर है, इसके मनन से भगवान श्रीरामजी श्रीकृष्ण जी दोनों के उपासकों को सुख मिलेगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ में भगवत् शरणागति एवं अर्थ पंचक का विवेचन अत्यधिक उपादेय है इससे ग्रन्थ पाठकों को विशेष लाभ होगा।

वर्तमान समय में समन्वय वाद एवं पारस्परिक सौहार्द तथा विलगाव को दूरकर एकत्व स्थापित करना ही परम श्रेयस्कर है। अतः श्री रामायणी जी महाराज का कार्य प्रशंसनीय है।

वैष्णवानुचर --श्री सीताशरण जी

श्री तु० सा० प्र० मंडल श्रीरामकोट

श्री अवधधाम १८/११/८७ ई०

श्री रामानन्दाय नमः

"सम्मतियाँ"

रामायणी श्री सुखराम दास जी ने श्री मानस की चौपाइयों का श्रीमद्भगवद्गीता के श्लोकों से जोड़ने का सुप्रयास किया है। आपका यह प्रयास बहुत स्तुत्य है। आपने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि मानस की पंक्तियां नानापुराण निगमागम सम्मत हैं, गोस्वामी जी की कल्पना नहीं —:" स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणम्" । की उक्ति को चरितार्थ करती है। मानस प्रेमी कथाकार-जन इससे अवश्य लाभान्वित होंगे, ऐसी आशा है। इसी को ध्यान में रखते हुए आपने अपना समय इसके संयोजन में लगाया है, इसकी सार्थकता तभी होगी जब उससे हम लाभ उठायें ! साथ ही "संक्षिप्त रामायण" की रचना कर भगवान श्री "राम" के चरित्रों को कतिपय—छन्दों में व्यक्त किया है। थोड़े में इसमें भगवान श्री राम के लीलाओं का दिग्दर्शन हो रहा है यह अधिक विस्तृत न होने पर भी अपने में सारगर्भित है। इसका नित्य चिन्तन मनन श्रवण भगवत् प्रेमियों के लिये भगवान श्री के चरणों में अनुराग सम्वर्धन के साथ ही परम कल्याणकारी होगा !!

"यथाशुभम्, कल्याणमस्तु"

— प्रधानाचार्य श्री रामकिंकरदास जी

श्री सीतारामचन्द्राभ्यां नमः श्रीमद् आञ्जनेयाय नमः
श्री सद्गुरु चरणकमलेभ्यो नमः

श्री गीता-रामायण समन्वय

बानि विनायक गुरु चरण हनुमत पवन कुमार ।
इष्टदेव श्री राम के वन्दौं बारम्बार ॥१॥
गीता रामायण सरस दोनों ग्रन्थ महान् ।
श्रवण मनन जो जन करत पावत पद निर्वान ॥२॥
राम कृष्ण दोऊ सुभग पूरण ब्रह्म स्वरूप ।
रामायण गीता युगल तैसेहि ग्रन्थ अनूप ॥३॥
वर्तमान में ग्रन्थ दोउ, इन समान नहिं कोउ ।
याते मैं कछु लिखत हौं जोड़ जथामति दोउ ॥४॥

इसलिये भी ये दोनों ग्रन्थ अनुपम हैं कि जैसे महर्षि हारीतजी ने वेद पुराण तथा सर्व शास्त्रों के सिद्धान्त का वर्णन इस प्रकार किया है । यथा :—

प्राप्यस्य ब्रह्मणो रूपं प्राप्तुश्च प्रत्यगात्मनः ।
प्राप्त्युपायं फलं चैव तथा प्राप्ति विरोधिनः ॥
वदन्ति सकला वेदा सेतिहास पुराणकाः ।
मुनयश्च महात्मानो वेद वेदांग वेदिनः ॥

अर्थात् जीव के परम प्राप्य ब्रह्म श्रीरामजी का स्वरूप ब्रह्म के दास भूत जीव का स्वरूप भगवत प्राप्ति के उपाय भगवत प्राप्ति से लाभ और जीव को भगवान से वियोग कराने वाले विरोधियों के स्वरूप इन्हीं पांच तत्त्वों को इतिहास पुराण सहित समस्त वेद तथा वेद वेदांग के जानने वाले महात्मा मुनि कहते हैं श्री गीता जी में परम प्राप्य ब्रह्म का स्वरूप वर्णित है। यथा :—

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षि शिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥१३।१३॥
बहूनाँ जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥७।१९॥

इसी प्रकार श्रीरामचरित मानस में भी वर्णित है यथा :—

विश्वरूप रघुवंसमनि करहु बचन विश्वास ।
लोक कल्पना वेद कर अंग अंग प्रति जासु ॥
अहंकार सिव बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान ।
मनुजवास सचराचर रूप राम भगवान ॥लंका-१५।

पुनः श्री गीता में —

ममैवांशो जीव लोके जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥१५॥

इसी प्रकार श्री राम चरित मानस में भी —

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । चेतन अमल सहज सुखरासी ॥

पुनः श्री गीता जी :—

मच्चित्ता मद्गत प्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥
तेषां सतत युक्तानां भजतां प्रीति पूर्वकम् ।
ददामि बुद्धि योगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥१०-९।१०

यह प्राप्ति के उपाय हैं — इसी प्रकार श्री रामचरित मानस में भी :—

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई । जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होइ जाई
तुम्हरेहि कृपा तुम्हहिं रघुनन्दन ।
जानहिं भगत भगत उर चन्दन ॥अर०

गीता जी में :—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥७।१४।

मानस :—

अतिशय प्रबल देव तव माया । छूटइ राम करहु जौ दाया ॥

प्राप्ति विरोधी रूप है । पुनः गीता जी में :—

नतद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥

यह प्राप्ति का फल है ।

श्री मानस में :—

सुर दुर्लभ सुख करि जग मांहीं । अन्तकाल रघुपतिपुर जाहीं ॥

पुनः दोनों ग्रन्थों के चरितनायक भी –मुनि जन धन सन्तन को सर्वस दोनों पूर्ण अवतार हैं। यथा–ऐते चांस कला पुन्सः रामस्तु भगवान स्वयं । या– ऐते चांश कला पुंसः कृष्णस्तु भगवान स्वयम् ।

इस प्रकार श्रीमन्मानस रामायण व श्री गीता जी दोनों सर्व वेद पुराणों व शास्त्रों के निचोड़ हैं । यथाः–

सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वदेव मयो मनुः ।
सर्वतीर्थमयी गंगा सर्वधर्म मया दया ॥
सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल नन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥

इसी प्रकार :–

नानापुराणनिगमागम सम्मतं यद्-
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा-
भाषा निबन्ध मतिमञ्जुलमातनोति ।

पुनः

गावत वेद पुराण अष्टदश छवो शास्त्र सब ग्रन्थन को रस ।
सार अंश सम्मति सबही की ॥

दोनों भगवत् स्वरूप हैं । –

वक्त्राणि पंच जानीहि पंचाध्यायाह्यनुक्रमात् ।
दशाध्यायाः भुजश्चैकं उदरं द्वे पदाम्बुजे ॥
एवं अष्टादशाध्यायी वाङ्मयी मूर्तिरीश्वरी ।
जानीहि ज्ञानमात्रेण महापातक नाशिनी ॥

इसी प्रकार श्री रामायण जी भी राम जी के स्वरूप हैं। यथा—

बालकांड प्रभु पाय अयोध्या कटि मन मोहै ।
उदर बन्यो आरण्य हृदय किष्किन्धा सोहै ॥
सुन्दर ग्रीव मुखारविन्द लंका कहि गायो ।
जामें रावन आदि निशाचर सेन समायो ॥
उत्तर मस्तक जानि सुचि यहि विधि तुलसीदास भन !
आदि अन्त लौं देखिये श्रीमन् मानस राम तन ॥

यथा — श्री गीता जी के लिए महात्माओं से सुनने में आया है कि एक बार श्री जगन्नाथ पुरी में अनेक सज्जनों ने किसी बात को लेकर सभा किया कि सर्वग्रन्थों में श्रेष्ठ कौन है। अंत में निर्णय किया गया कि श्री जगन्नाथ जी के मन्दिर में ग्रन्थ रख दिये जाए तो प्रभु जिसे श्रेष्ठ कहेंगे वही निर्णीत हो जाएगा। परिणामतः रात्रि को सब ग्रन्थ रखे गये प्रातःकाल जब पट खोला गया तो लिखा हुआ मिला—

एकं शास्त्रं देवकी पुत्र गीतमेको देवो देवकी पुत्र एव !
एको मन्त्रस्तस्य नामानि यानि कर्माण्येकं तस्य देवस्य सेवा !!

इसी प्रकार श्री काशीपुरी में जब सब ब्राह्मणों ने श्री मानस के प्रति विशेष शंका की कि हम तब जानेंगे कि मानस रामायण श्रेष्ठ है जब श्रीविश्वनाथजी के मन्दिर में सब ग्रन्थों के नीचे रामायण रखी जाए और सबके ऊपर हो जाए। वैसा ही किया गया तो प्रातःकाल सबके ऊपर श्री रामचरित मानस मिला जिस पर स्वयं श्री शिव जी का हस्ताक्षर व प्रामाणिक सही "सत्यं शिवं सुन्दरम्" लिखा हुआ मिला ।

इसी प्रकार जब काशीपुरी में मानस रामायण को खण्डन या नीचा दिखाने के लिये पण्डितों ने उस समय काशी के सर्वोच्च अद्वैताचार्य श्री मधुसूदन सरस्वती से आग्रह किया तो उन्होंने मानस को माँगकर सम्पूर्ण पढ़ा बाद में अत्यंत प्राभावित होकर निम्न श्लोक लिख दिया ।

आनन्द कानने ह्यस्मिन् जंगमस्तुलसी तरुः !
कविता मञ्जरी भाति राम भ्रमर भूषिता !!

श्री गीता जी व श्रीमन्मानस समन्वय

श्री गीता जी :—

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकर कारकैः !
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः !!१-४३

श्री मानस जी :—

कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं !
जिमि कपूत के ऊपजे कुल सद्धर्म नशाहिं !!४-१५!

श्री गीता जी :—

वासाँसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही !!

श्री मानस जी :—

जोइ तनु धरउँ तजउँ पुनि अनायास हरिजान !
जिमि नूतन पट पहिरइ नर परिहरइ पुरान !!

श्री गीता जी :—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः !
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः !!२-२३

श्री मानस जी :—

ईश्वर अंश जीव अविनाशी ! चेतन अमल सहज सुखराशी !!

श्री गीता जी :—

ममैवांशो जीव लोके जीवभूतः सनातनः !
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृति स्थानि कर्षति !!

श्री मानस जी :—

तारा विकल देखि रघुराया ! दीन्हज्ञान हरि लीन्ही माया !!
छिति जल पावक गगन समीरा ।
पंच रचित यह अधम शरीरा ।।

प्रकट सो तन तव आगे सोवा ।

जीव नित्य केहि लगि तुम रोवा ॥

श्री गीता जी :—

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।
संभावितस्यचाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥ (२-३४)

श्री मानस जी :—

सम्भावित कहँ अपयश लाहू । मरन कोटि सम दारुन दाहू ॥

श्री गीता जी :—

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृत निश्चयः ॥(२-३७)

श्री मानस जी :—

तजउँ प्रान रघुनाथ निहोरे । दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरे ॥

श्री गीता जी :—

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ।
यस्यां जागर्ति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥(२-६९)

श्री मानस जी :—

मोह निशा सब सोवनि हारा । देखहिं सपन अनेक प्रकारा ॥
यहि जग जामिनि जागहिं जोगी । परमारथी प्रपच वियोगी ॥

श्री गीता जी :—

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥(३-३५)

श्री मानस जी :—

प्रथमहिं विप्र चरन अति प्रीती ।

निज-निज कर्म निरत श्रुति नीती ।।

यहि कर फल पुनि विषय विरागा ।

तब मम चरन उपज अनुरागा ।।

४।१६।७

श्री गीता जी :—

काम एष क्रोध एष रजो गुण समुद्भवान् ।

महाशानो महापाप्मा विद्धयेनमिह वैरिणम् ।।३-३७

श्री मानस जी :—

जनहि मोर बल निज बल ताही ।

दुहुँ कहँ काम क्रोध रिपु आही ।।(३-४३-७)

श्री गीता जी :—

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ।

यथोल्वेनावृतं गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ।।(३-३८)

श्री मानस जी :—

सुनि सुग्रीव परम भय माना ।

विषय मोर हरि लीन्हेउं ग्याना ।।

श्री गीता जी :—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मं संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे ।।(४-७,८)

श्री मानस में :–

जब जब होइ धरम कै हानी ।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ।।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ।
सीदहिं विप्र धेनु सुर धरनी ।।
तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा ।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ।।
असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु ।
जग विस्तारहिं विसद यश राम जनम कर हेतु ।।१२१बा०

श्री गीता जी :–

जन्म कर्म च मे दिव्यं एवं यो वेत्ति तत्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ।।४-९

श्री मानस जी :–

यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा ।

श्री गीता जी :–

ये यथा माम् प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।।४-११

श्री मानस जी :– इस श्लोक का चरितार्थ श्री मानस

के सातो कांडों में प्रायः मिलता है ।

बालकांड :—

जिनकी रही भावना जैसी । प्रभु मूरति देखी तिन तैसी ।।
देखहिं रूप महा रनधीरा । मनहु बीर रस धरे शरीरा ।।
डरे कुटिलनृप प्रभुहिं निहारी । मनहु भयानक मूरति भारी ।
रहे असुर छल छोनिप वेषा । ते प्रभु प्रकट काल सम देखा।।
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई । नर भूषन लोचन सुखदाई।।
नारि विलोकहिं हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप ।
जनु सोहत शृंगार धरि मूरति परम अनूप ।।(२४१)
विदुषन्ह प्रभु विराटमय दीसा । बहु मुख कर पग लोचन सीसा।।
जनक जति अवलोकहिं कैसे । सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे
सहित बिदेह विलोकहिं रानी । सिसु सम प्रीति न जाइ बखानी
जोगिन्ह परमतत्वमय भासा । सांत सुद्ध सम सहज प्रकाशा।
हरि भगतन देखे दोउ भ्राता । इष्टदेव इव सब सुखदाता ।
रामहिं चितव भाय जेहि सीया । सो सनेह सुख नहिं कथनीया
उर अनुभवति न कहिसक सोऊ । कवन प्रकार कहै कवि कोऊ
एहि विधि जाँहि रहा जस भाऊ । तेहि तस देखेउ कोशलराऊ
१।४१-४२

अयोध्या कांड :—

जो जेहिभाय रहा अभिलाषी । तेहितेहि कै तसितसि रुचि राखी।

अरण्य कांड :-

रिषिपतिनी मन सुख अधिकाई । आसिषदेइ निकट बैठाई ।।

मन सुख अधिकाई-मन, आशिष देइ-वचन, बैठाई-कर्म है, अर्थात् मन कर्म बचन से अनुसुइयाजी ने सीता जी का आदर किया तब महारानी जानकी जी भी-

सुनि जानकी परमसुख पावा । सादर तासु चरन सिरुनावा ।।

सुख पावा-मन से, चरन सिर नावा-तन से, चरन सिर नावा-बचन से कृतज्ञता प्रकट की । यथा-

~~किष्किन्धाकांड~~ :-

मोंपहिं होइ न प्रति उपकारा । बँन्दउ तवपद बारहिं बारा ।।

प्रभुपहिचान परेउ गहि चरना । सो सुख उमाजाइ नहि बरना ।

पुलकित तन मुख आव न बचना । देखत रुचिर वेष कै रचना

मन, कर्म, बचन तीनों से हनुमान जी निमग्न हो गए । सो सुख उमा जाहि नहि बरना ।-यह सुख मन का धर्म है । पुलकित तन-यह तन एवं कर्म और मुख आव न बचना-यह बचन की दशा है ।

श्री रघुनाथ जी भी मन, कर्म, बचन से प्रेम विह्वल होते है ।

तब रघुपति उठाय उरलावा । निज लोचन जल सींचि जुड़ावा ।

सुनुकपि जियमानसि जनिऊना । तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना ।

उठाकर हृदय से लगाना-तन से, सुनु कपि-बचन से

तथा तें मम प्रिय लक्षिमन तें दूना - यह प्रियत्व मन का धर्म है।

सुन्दर काण्ड :-

देखी राम सकल कपिसेना। चितइ कृपा करि राजिव नैना॥

क्योंकि—

गिरि तरु नख आयुध सबबीरा। हरिमारग चितवहिं मतिधीरा

इसी प्रकार विभीषण जी भी मन, कर्म, बचन से लग गये।

नयन-नीर पुलकित अतिगाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता

तो श्री राम जी -

दीनबचन सुनि प्रभु मन भावा, भुजविसाल गहि हृदय लगावा
कहु लंकेश सहित परिवारा।

मन धरि धीर—मन से, नयन नीर पुलकित-तन से, कही मृदु बाता-बचन से। इसी प्रकार श्री राम जी भी तीनों लगाये- भुज विशाल गहि-तन, प्रभु मन भावा-मन, कहु लंकेश सहित परिवारा-बचन।

लंका काँड :-

जब कुम्भकर्ण चला तो इच्छा किया कि जाएंगे तो नेत्र सुफल करेंगे। यथा :-

अब भरिअंक भेटु मोहि भाई। लोचन सुफल करौं मैं जाई॥

तो सरकार जी भी तदनुकूल कहते हैं —

सुनु सौमित्र विभीषण अनुज सँभारेहु सैन ।
मैं देखउँ खल बल दलहिं बोले राजिव नैन ॥

उत्तर कांड :—

अमितरूप प्रगटे तेहि काला । जथाजोग मिले सबहिं कृपाला ।

अर्थात् श्री भगवान में और भगवान के भक्तों में बहुत अधिक साम्य है । जैसे प्रभु के प्यारे भक्त ब्राह्ममुहूर्त में अपने इष्ट भगवान का ध्यान करते हैं । उसी प्रकार श्री भगवान भी अपने भक्त का ध्यान करते हैं । इस चरित का प्रमाण महाभारत से लेना चाहिए । यथा– एक समय श्री युधिष्ठिर जी श्री कृष्णचन्द्र के दर्शन करने बड़े सबेरे गये तो देखते हैं कि कि भगवान ध्यान लगाये बैठे हैं । युधिष्ठिर जी लौट आते हैं पुनः प्रभु को उठा हुआ देखकर जाकर पूछे कि प्रभु आपका ध्यान तो सब करते हैं आप किसका ध्यान करते थे । तो प्रभु बोले–युधिष्ठिर ! हमारा ध्यान "हमारा भक्त" करता है और हम अपने भक्त का ध्यान करते हैं । जिस समय तुम आये उस समय हम अपने अनन्य भक्त श्री भीष्मा-चार्य जी का ध्यान करते थे कि उनको शरशैया पर पड़े ५६ दिन हो चुके हैं अब जाकर दर्शन देकर मुक्त करना चाहिए ।

पुनः भगवान के भक्त स्नान करके भगवान के मन्त्रराज अथवा भगवान का नाम जपते रहते हैं । उसी प्रकार श्री भगवान भी अपने भक्त का जाप करते हैं यथा–

भरत सरिस को राम सनेही । जग जप राम राम जप जेही ।

भगवान के भक्त भगवान के चरित का पाठ करते हैं उसी प्रकार भगवान भी अपने भक्त के चरित 'भक्तमाल' का पाठ करते हैं । पुनः भगवान के भक्त भगवान का चरित कहते हैं वैसे भगवान भी अपने भगत की कथा कहते हैं ।

सकृत प्रणाम प्रनत जस बरनत कहत सुनत फिरि गाउ । भक्त भगवान के चरित बड़े प्रेम से सुनते हैं । यथा—

'यत्र-यत्र रघुनाथ कीर्तनं तत्र-तत्र कृत मस्तकाञ्जलिम् ।'

राम चरित सुनिबे को रसिया ।

इसी प्रकार प्रभु भी भक्त का चरित बड़े प्रेम से सुनते हैं, श्री भरतलाल जी श्री भगवान राम के प्रेम में चार वस्तु भूल जाते हैं यथा :—सानुज सखा समेत मगन मन । बिसरे हरष शोक सुख दुखगन ।। तो भगवान भी चार भूलते हैं यथा—

उठे राम सुनि प्रेम अधीरा । कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा ।।

जैसे श्री प्रभु अति गोप्य हैं :—

एको देवः सर्व भूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षीचेताकेवलोनिर्गुणश्च ।।

किन्तु भक्त प्रकट ही कर लेता हैं —

भगतबछल प्रभु कृपानिधाना । बिस्ववास प्रगटे भगवाना ।।

उसी प्रकार भक्त भी गुप्त रहना चाहते हैं । उसी

में अपना कल्याण मानते हैं। यथा—रहहिं सदा अपनपो दुराये। सब विधि कुशल .... ।। जैसे—श्रीकबीरजी अपनी प्रतिष्ठा के नाश के लिए एक हाथ में मदिरा की बोतल और एक हाथ वेश्या के गले में देकर काशी नगर में घूमते थे क्योंकि 'प्रतिष्ठा सूकरी विष्ठा, तेन त्यक्त्वा सुखी भवेत्। परन्तु फिर भी भगवान उन भक्तों की महिमा जगत में प्रकट ही कर देते हैं। जैसे- बाल्मीकि स्वपच बहुत ही गुप्त रहते थे; परन्तु प्रभु प्रकट ही कर दिये। (भक्तमालमें विस्तृत है) श्रीबाल्मीकि जी स्वपच गुप्त रहते थे। अपने भाव को प्रकट नहीं होने देते थे। क्योंकि भक्तिभाव जितना ही गुप्त रखा जाय उतना ही रसमय होता है। महापुरुषों ने बताया है कि जैसे गर्भवती स्त्री अपने गर्भ को छिपाती है उसी प्रकार भक्त लोग अपने भाव को गुप्त रखते हैं। यदि कोई कहे कि भक्त भाव गुप्त रखते हैं उस भाव का क्या लक्षण है, तो श्री रूप गोस्वामी जी ने अपने भक्ति रसामृत सिंधु में लिखा है कि जिस प्राणी के हृदय में भावांकुर जायमान होते हैं उनमें नौ लक्षण प्रकट हो जाते हैं। यथा -

> क्षान्तिरव्यर्थकालत्वं विरक्तिर्मानशून्यता ।
> आशाबन्धः समुत्कण्ठा नामगाने सदा रुचिः ।।
> आसक्तिस्तद्गुणाख्याने रतिस्तद् वसतिस्थले ।
> इत्यादयोऽनुभावः स्युर्जाता भावाङ्कुरे जनैः ।।

अर्थात् (१) क्षमापना (२) समय व्यर्थ में न बिताना।

(३) संसार विषय से विराग (४) मान रहित होना, (५) श्री प्रभु के चरित गुन में अत्यन्त आसक्ति (६) श्री प्रभु के वास स्थल जो श्री धाम हैं श्री अवध, श्री वृन्दावन आदि में अत्यंत प्रीति । (७) प्रभु से मिलने की सदा आशा लगाये रहना (८) हृदय में उत्कट इच्छा होती है । (९) और श्री सरकार के परम पावन नाम जपने में सदा रुचि होना । ये नो लक्षण हैं । उक्त लक्षणों सेसमन्वित महापुरुष श्री मानस में अनेक मिलते हैं । यथा— श्री विश्वामित्र जी में सभी लक्षण घटते हैं ।

'तब मुनिबर मन कीन्ह विचारा, प्रभु अवतरेउ हरन महि भारा ।

'प्रभु अवतरेउ' यह भाव आया कि हमारे इष्टदेव स्वामी श्री रामजी का अवतार हुआ है । पृथ्वी का भार उतारने के लिए जैसे ही स्वामी सेवक का भावांकुर जायमान हुआ कि प्रसंग में नवों लक्षण प्रकट हो गये । प्रथम–क्षमा पना ! जो विश्वामित्र अपनी क्रोधाग्नि से श्री वशिष्ठ जी के सौ पुत्रों को भस्म कर दिया और अपने ही सौ पुत्रों को क्षण भरमें समाप्त कर दिये सो महर्षि बिश्वामित्र जी में जब यह भावांकुर उत्पन्न हुआ तो उसके प्रभाव से परम उपद्रवी मारीच व सुबाहु तथा ताड़का आदि के उपद्रव को सहन कर लिए व शान्त रह गये । यथा–
"देखत जज्ञ निशाचर धावहिं, करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं"
दूसरा लक्षण समय व्यर्थ न विताना सो भी श्री विश्वामित्रजी.... में दखाई देता है । जहँ जप जोग जज्ञ मुनि करही' ।। ....

अर्थात् सदैव जप जज्ञ जोग में लगे रहते थे । व्यर्थ समय
नहीं बिताते थे ।

तीसरा लक्षण विराग को प्राप्त थे । संसार के विषय भोगों से
उपरत सो भी विश्वामित्र जी में पाया जाता है । क्योंकि यदि संसार
बिषय से बिराग न होता तो जंगल में क्यों वास करते । यथा--
विश्वामित्र महामुनि ज्ञानी, बसहिं बिपिन शुभ आश्रम जानी ।

(४) – मान शून्यता भी महर्षि में द्रष्टब्य है — "मैं जाँचन
आयउँ नृप तोही" । जो ब्यक्ति मानी होगा वह भिक्षा नहीं
माँगेगा । "सेवक सुख चह मान भिखारी"

(५) प्रभु से मिलने की आशा लगाये रहना । विश्वामित्र
जी में यह भी द्रष्टब्य है — एहूँ मिस देखौं पद जाई । करि
बिनती आनउँ दोउ भाई, । यानी आशा उन्हें बहुत पहले से
थी किंतु कोई जाने का बहाना नहीं मिलता था । अब मिला
कि यज्ञ के विघ्न को दूर करने के लिये ले आना चाहिए ।

[६] अपने प्रभु से मिलने की उत्कट इच्छा सो भी महर्षि
में देखी जाती है । 'ज्ञान विराग सकल गुण अयना । सो
प्रभु मैं देखौं भरि नयना ।'

[७] प्रभु के परम पावन नाम का जपना यह भी लक्षण
है । सो विश्वामित्र जी जप जज्ञ करते ही रहते हैं ।

[८] श्री हरि के पावन चरित में अतिशय आशक्ति सो भी पूर्ण है
"करि भोजन मुनिवर विज्ञानी । लगे कहन कछु कथा पुरानी ।
भाव यह कि भोजन करके विश्राम नकरके कथा ही कहने लगे

और संध्या समय तक कथा कहकर पुनः संध्यावन्दन के बाद कथा कहने लगे । १२ बजे रात तक कथा कहने लगे ।

"कहत कथा इतिहास पुरानी । रुचिर रजनि जुग जाम सिरानी ।

(६) अपने उपास्य देव वास स्थल अर्थात् धाम में अत्यन्त प्रीति सो भी इनमें परिपूर्ण है "आजु सकल सुकृत फल पाइहौं ।"

सुखै की सींव अवधि आनन्द की अवध विलोकिहौं जाइहौं ।' (गीतावली रामायण)

अब यदि कोई प्रश्न करे कि सब लक्षण तो अंकुर रूप हुआ तब अंकुर निकलने के बाद वृक्ष बहुत बड़ा होता है। उसमें फल लगता है । तो यहाँ क्या है ? इसका उत्तर है कि जो श्री विश्वामित्र जी में आगे चलकर प्रेम की मात्रा जो बहुत विशालता को प्राप्त हुई वही वृक्ष का बड़ा होकर फैलना है यथा-- जब श्री अवध में पहुँचने पर श्री चक्रवर्ती जी ने चारों भाइयों को मुनि के चरणों में प्रणाम कराये तो महर्षि के हृदय में इतना प्रेम हुआ कि देह की सुधि बुधि भूल गये । यहाँ तक कि आशीर्वाद देने की भी सुध नहीं रह गई । यथा--

"पुनि चरनन मेले सुत चारी । राम देखि मुनि देह बिसारी ।
भये मगन देखत मुख सोभा । जनु चकोर पूरन ससि लोभा ।

पुनः जब श्री रामजी मिथिला में धनुष तोड़ते हैं । तब तो महर्षि का प्रेम समुद्रवत् उमड़ जाता है । यथा---

"प्रभु दोउ चाप खंड महि डारे । देखि लोग सब भये सुखारे ।
कौशिक रूप पयोनिधि पावन । प्रेम बारि अवगाह सुहावन ।
राम रूप राकेश निहारी । बढ़त बीचि पुलकावलि भारी ।

तो यही वृक्ष की विशालता को प्राप्त होना है । -फल का स्वरूप तो सच्चिदान्द आनन्दघन श्री राम लक्ष्मण जी जो समस्त धर्म जोग ज्ञान विज्ञान मात्र सबके फल रूप हैं ।

'सब साधन कर सुफल सुहावा, लखन राम सिय दर्शन पावा ।

वही प्रभु शिष्य रूप में प्राप्त हुए और शिष्य भी कैसे कि संकेत मात्र से मन का भाव समझकर सेवा करने वाले । तथा रुख को देखकर चलने वाले । यथा—

नीच ज्यों टहल करें । राखैं रुख अनुसरे

कौशिक से कोही बस किये दोउ भाई हैं । (गीतावली)

पुनः "मुनिवर शयन कीन्ह तब जाई, लगे चरण चापन दोउभाई ।

इसी प्रकार श्री भरत लाल जी में भी ये नौ लक्षण घटित हैं । हित हमार सिय पति सेवकाई । यह भावांकुर है ।

(१) भरत दयानिधि दीन्ह छोड़ाई । यह क्षमा है ।

[२] राम चरण पंकज मन जासू, लुबुध मधुप इव तजइ न पासू ॥ रटहु निरन्तर गुन गन पाँती ।-यह व्यर्थ का समय न बिताना हुआ ।

(३) तेंहि पुर बसत भरत बिनु रागा । एवं सिर भर जाऊँ उचित अस मोरा, यह विरक्ति है ।

[४] चलत पयादें खात फल पिता दीन्ह तजि राज....[मानशून्यता]

[५] एकहि आँक इहइ मन माँही । प्रातकाल चलिहहु प्रभु पाँही" आपन जानि न त्यागिहैं मोंहि रघुवीर भरोस । वह आशा बन्ध है ।

(६) पुनः जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ, तब पथ परत उताइल पाऊँ । हरर्षांहं निरखि राम पद अंका । – यह उत्कंठा है ।

[७] 'पुलक गात हिय सिय रघुबीरू । जीह नाम जप लोचन नीरू
यह प्रभु के नाम गान में रुचि का स्वरूप है।

[८] बूझहि बैठि राम गुन गाहा । कह हनुमान सुमति अवगाहा ।
'सुनत वचन बिसरे सब दूषा....' यह चरित में आशक्ति है ।

[९] पूछत सखहिं सो ठाऊँ देखाऊँ । नेक नयन मन जरनि जुड़ाऊ।
अति सनेह सादर भरत कीन्हेउ दण्ड प्रणाम । यह धाम रति है ।
इस प्रकार भक्त का भावांकुरित जीवन मानस में द्रष्टव्य है ।

श्री गीताजी :—

"तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्व दर्शिनः ।।" (४।३४)

श्री मानसजी :—

वन्दउँ पद धरि धरनि सिर, विनय करउँ कर जोरि ।
बरनहुँ रघुबर विसद जस, श्रुति सिद्धान्त निचोरि ।।
(१–१९)

श्री गीताजी :—

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्ति अचिरेणाधिगच्छति ।।

श्री मानसजी :—

श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई । – तथा—
सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई । जो हरि कृपा हृदय बस आई ।।

श्री गीताजी

न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
स्थिर बुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ।।

श्री मानसजी :—

सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं ।
दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं ।

श्री गीताजी :—

भोक्तारं यज्ञ तपसां सर्वलोक महेश्वरम् ।
सुहृदं सर्व भूतानां ज्ञात्वा मां शान्ति मृच्छति ॥

श्री मानसजी :—

राम प्राणप्रिय जीवन जी के । स्वारथ रहित सखा सबही के ।

श्री गीताजी :—

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन (६।४६)
योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥ ६।४७

श्री मानसजी :—

सब ममप्रिय सब ममउपजाए, सबते अधिक मनुज मोहिभाए।
तिन्हमँह द्विज द्विजमँह श्रुतिधारी, तिन्हमँह निगम धरम अनुसारी
तिन्ह मँह पुनि बिरक्त पुनिज्ञानी, ज्ञानिहुते प्रिय मोहि बिज्ञानी ।
तिन्हते प्रिय मोहिं पुनिनिज दासा, जेहिगतिमोरि न दूसरिआसा
पुनि-पुनि सत्यकहउँ तोहिपाहीं, मोहिं सेबकसम प्रिय कोउ नाहीं

श्री गीताजी :—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥ ७।१४

श्री मानसजी :—

अतिसय प्रबल देव तवमाया, छूटइ राम करउँ जो दाया।

श्री गीताजी :—

अनन्य चेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्य युक्तस्य योगिनः ।। (८।१४)

श्री मानसजी :—

बचन करम मन मोरि गति, भजन करहिं निहकाम।
तिन्हके हृदय कमल महँ, करउँ सदा विश्राम ।।

श्री गीताजी :—

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ।।

श्री मानसजी :—

जाकर नाम मरतमुख आवा, अधमउ मुकुत होइ श्रुतिगावा।

श्री गीताजी :—

अनन्याश्चिन्तयन्तो माम् ये जनाः पर्युपासते।
तेषाँ नित्याभियुक्तानां योग क्षेमं वहाम्यहम् ।। (९।२२)

श्री मानसजी :—

सुनुमुनि तोहिकहउँ सहरोषा,
भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा।
करउँ सदा तिन्हकर रखवारी, जिमि बालकहि राख महतारी।।
गह सिसु बिच्छु अनल अहिधाई, तँह राखइ जननी अरगाई ।।

श्री गीताजी :—

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ।। ९।२९

श्री मानसजी :—

जद्यपि सम नहि राग न रोषू, गहहिं न पाप पुन्य गुन दोषू
करमप्रधान विस्व करिराखा, जोजस करइ सोतस फल चाखा।
तदपि करहि सम विषम विहारा, भगत अभगत हृदयअनुसारा
अगुन अलेप अमान एकरस, राम सगुन भयभगत प्रेमबस ॥

श्री गीताजी :—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥ २६ ॥

इस श्लोक में भगवान ने बताया है कि हे अर्जुन ! मेरे पूजन में सुगमता भी है कि पत्र, पुष्प, फल जल इत्यादि जो कोई भक्त मेरे लिए प्रेम से अर्पण करता है इस शुद्ध बुद्धि निष्काम प्रेमी भक्त का प्रेम पूर्वक अर्पण किया हुआ वह पत्र पुष्पादि मैं सगुण रूप से प्रकट होकर प्रीति सहित खाता हूँ। यहाँ प्रीति समेत खाने का तात्पर्य यह है एक परमात्मा तो सर्वव्यापक है सबमें है अन्तर्यामी है और उनका वचन भी है कि

"अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देह माश्रितः।
प्राणापान समोकृत्वा पचाम्यन्नम् चतुर्विधम्।"

यह तो प्रभु के निर्गुण सत्ता के द्वारा सबका धारण हुआ जो तत्व ज्ञानियों का विषय है किंतु प्रभु कहते हैं कि यदि कोई प्रेम सहित अर्पण करे तो मैं जो सबमें स्थित हूँ —
"सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो...."वही प्रत्यक्षतः प्रकट होकर प्रेम पूर्वक खाता हूं। जैसे– नामदेव आदि संतो के बुलाने पर खाये थे।

इसके विशेष अर्थों में तत्व विवेचनी टीका में लिखा है कि पत्र के सन्दर्भ में भगवान श्रीकृष्ण चन्द्र ने द्रौपदी की बटलोई में से एक पत्र निकालकर खाया जिससे तीनों लोक तृप्त हो गये और दुर्वासा जी को अजीर्ण मालूम हुआ वे शिष्यों सहित उधर से उधर ही चले गए।

पुष्पमें गजेन्द्रजी को जब ग्राहने पकड़ा था तब उससे मुक्त होने के लिए वह हजारोंवर्षों तक लड़ते रहे किन्तु हथिनियों व बच्चों की सहायता करने पर अपने को छुड़ा न सके, ग्राह का बल जलमें बढ़ता जाता था, तो उन्होंने कातर होकर एक फूल सूंड़ से उठाया तथा अर्पण की भावना कर पुकारा, तो भगवान उस समय सत्यभामा जी के साथ चौसर खेलते थे तो तुरन्त पासा फेंककर गरुड़ पर सवार होकर चल दिये। अन्त में गरुड़जी को भी छोड़ दिये कि यह हमारे वेग से नहीं चल सकता और भक्त का कष्ट बहुत शीघ्र दूर करना है।

फल में श्री शबरी जी ने जो चिरसंचित फल दिये वे प्रभु प्रशंसा करके खाये हैं। तथा जहाँ भी गये हैं उन फलों का बखान भी किये हैं—अवध आने पर भी—

"घर प्रिय गुरु गृह सदन सासुरे भइ जब जहँ पहुनाई।
तहँ तहँ कहि शबरी के फलन की रुचि माधुरी न पाई।

इसी प्रकार 'तोय' में राजा रन्तिदेव जब अड़तालिस दिन बाद भोजन करना चाहे तो एक भूखा ब्राह्मण आया इसके बाद एक शूद्र आ गया फिर कई कुत्तों को लिए हुए एक चांडाल आया तो उसे जल तक पिला दिया स्वयं परम गति

के अधिकारी हुए। इन्हीं उक्त भावों को निम्न पदों में तुकबद्ध करने का प्रयास किया गया है —

१—पत्र— द्रोपदी की बटलोई में न रह्यो अन्न कन
किन्तु लियो खोज एक पत्र घनश्याम ने।
खाय सोई पत्र तृप्त कियो तीन लोक,
पायो अपच, सशिष्य दुर्वासा पेट बाम ने।
आये श्राप देने किन्तु भये श्राप जोग,
भागे, हार गये हरि की कृपालुता के सामने।
धन्य धन्य प्रेम ! तुच्छ पात पै ही रीझे,
प्रभु, ताते यश गायो तुच्छ जन सुखराम ने ॥

२— पुष्प— गज की पुकार सुन धाये हरि धाम तजि,
भक्त वत्सल गुन से भरे हिये चाव रे।
गरुड़ सवारी किए पै जु धीमी चाल लखि,
छोड़ ताहि आये बेगि आरत के ठाँव रे।
सुण्ड में उठाये एक फूल देखि दीन गज,
भक्ति पै निहाल, मारयो ग्राह अर्द्ध नाँव रे।
दास सुखराम जय जय कहैं देव बृन्द,
सन्त पुलकायमान भक्ति को प्रभाव रे ॥

३— फल— शबरी को प्रेम कौन भाँति को बखान करै,
जाके फल स्वाद प्रभु निज मुख गाये हैं।
रिषि सोचते थे राम आवेंगे हमारी कुटी,
पै उन्हीं से पूछ भीलनी के गृह आये हैं।

देखत ही प्राणधन शबरी निहाल भई,
चरण पखारि स्वच्छ आसन बैठाये हैं ।
भक्ति पै विभोर फल खात माँगि-माँगि प्रभु,
दास सुखराम मानो जन्म के भुखाये हैं ।

४—जल—राजा रन्तिदेव रहे अति ही उदार चित्त,
संग परिवार भजैं राम को भवन में ।
दिन आठ चालीस उपास पै मिल्यो जो अन्न,
आये एक विप्र कहैं महाकष्ट तन में ।
दियो अर्द्ध भोजन सो पाय तुष्ट भये द्विज,
राजा हू निहाल भयो खेद नहीं मन में ।
शेष अर्द्ध भोजन संतोष जो करन चाहैं,
आयो एक शूद्र अति भूखो तेहि छन में ।

५—अतिथि बिलोकि शेष भाग सों जिवाये आप,
पुनि एक जन आयो श्वान लिये संग में ।
कहै श्वान युत मेरी भूख अति भारी दीजै,
अन्न सो खवाय रहै कीर्ति तेरी जग में ।
प्रेम सो नृपाल दियो ताहि शेष थाल,
भयो नीच खुशहाल बच्यौ जल मात्र लग में ।
किन्तु ताहि छन अति तृषित चाँडाल एक,
आय कहै 'रक्षा करो' परूँ तेरे पग में ।

६— राजा रन्तिदेव रहे अति ही सुजान भक्त,
सभी भूत प्राणियों में देखैं भगवान को ।

ऐसे ही विचारि के चाँडाल हूँ को जल दिये,
प्रेम में न राख्यो कछु, लाले पड़े प्रान को ।
जन सुखराम ताही छन में प्रकट भये,
मुदित त्रिदेव कहैं मागु वरदान को ।
बोले रन्तिदेव नाथ मेरे कछु चाह नहीं,
दीजै एक भक्ति निज चरण निदान को ।

श्री मानसजी :—

इसी प्रकार श्री रामचरित मानस में भी श्री भगवान राघवेन्द्र जू को भी जो जो भक्त पत्र, पुष्प; फल; जल अर्पण किये हैं तो प्रभु बहुत प्रेम पूर्ण होकर स्वीकार किये हैं–यथा–

दल फल फूल कन्द विधि नाना । पावन सुन्दर सुधा समाना ॥

श्री चित्रकूट में कोल भीलों ने फल फूल तथा मूल के द्वारा प्रभु का स्वागत किया है और प्रभु ने भी परम प्रसन्न होकर स्वीकार किये हैं । पुनः श्री भरद्वाज जी ने भी—

कन्द मूल फल अंकुर नीके । दिये आनि मुनि मनहु अमी के ॥
सीय लखन जन सहित सुहाये । अति रुचि राम मूल फल खाये ॥
भये विगत श्रम राम सुखारे ।···· ···· ····

पुनः महर्षि वाल्मीकि जी ने– यथा—

देखि राम छबि नैन जुड़ाने । करि सनमान आश्रमहिं आने ॥
मुनिवर अतिथि प्रेम प्रिय पाये । कन्दमूल फल मधुर मँगाये ॥
सिय सौमित्र राम फल खाये । तब मुनि आसन दिये सुहाये ॥

पुनः श्री शबरी जी ने भी—

सादर जल लै चरन पखारे । पुनि सुन्दर आसन बैठारे ॥

कन्दमूल फल सुरस अति, दिये राम कहँ आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खाये, बारम्बार बखानि ॥

पुनः— केवट राम रजायसु पावा । पानि कठौता भरि लै आवा ॥
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी । दोना भरि भरि राखेसि पानी ॥

सवैया--कोल किरात सुने प्रभु आये चले हिय में अति हर्षित भारी ।
लै फल मूल समै अनुकूल धरे ढिग जाय के कीन्ह जोहारी ॥
देखि कै रूप अनूप छके सो रहैं पल रोकि भरे दृग बारी ।
प्रेम भरे सुखराम' कहैं 'हम सेवक हैं करिहैं रखवारी ॥

कवित्त— भरद्वाज आश्रम पधारे जब राम भद्र,
मुनि अति आनन्द जनु ब्रह्मराशि पाये हैं ।
करिकै सन्मान शुभ आसन बैठारे आप-
कन्द मूल अंकुर फल प्रेम युत लाये हैं ॥
सीय सौमित्र सह खाये फल प्रेम रुचि,
कीन्हें बड़ाई प्रभु मन सचुपाये हैं ।
मुनी हूँ प्रशंसा करि प्रभु को रिझाय लियो,
दास सुखराम माँगि भक्ति वर पाये हैं ॥

(२) वाल्मीकि आश्रम पधारे जब राघवेन्द्र,
सुनि कै मुनि आये प्रभु लेन भक्तिभाव से ।
करि कै सनमान प्रभुहिं आश्रम लिवाइ लाये,
दिये मूल फल राघव खाये अति चाव सों ॥
स्थान पुनि पूछ्यो औ वतायो मुनि चौदह ठौर,
भवसिन्धु तरिबे को उत्तम उपाव सो ।

मुनि के माधुर्य औ परत्व भरे बैन सुनि,
दास सुखराम भयो प्रभु को अघाव सों ॥

इसी प्रकार भक्ता शवरी जी तथा केवट की भी भक्ति कही गई है ।—

सबरी जी देखी प्रभु आये हमारे गृह ।
भाग निज जानि परी चरनन लपटाय के ॥
श्यामल सलोने गात लखि तन पुलकित ।
आसन बैठारे पखारे हरि पाय के ।
मूल फल सुरस सुहावन जानि दिये ।
प्रभु खाये अति प्रेम भरि पुनि–२ गाय के ॥

दोहा—श्रीराम कहेउ तब केवटहिं, नौका लावो पास ।
गंगा पार करो मुझे, करना कानन वास ॥
पार जान चाहत प्रभो लीजिय चरण धुवाय ।
तरनी मुनि घरनी बने, करिहौं कहा उपाय ॥

श्री गीताजी :—

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यक् व्यवसितो हि सः ॥९।३०

श्री मानसजी :—

जो नर होइ चराचर द्रोही । आवे सभय सरन तकि मोहीं ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना । करउँ सद्य तेहि साधु समाना ॥

श्री गीताजी :—

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्ति निगच्छति ।
कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ।९।३१

श्री मानसजी :—

हरि सेवकहिं न व्याप अविद्या । प्रभु प्रेरित व्यापइ तेहि विद्या ।।
ताते नाश न होइ दास कर । भेद भगति बाढ़इ विहंगवर ।।

श्री गीताजी :—

मच्चित्ता मद्गत प्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ।।
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीति पूर्वकम् ।
ददामि बुद्धि योगं तं येन मामुपयान्ति ते ।।१०।६-१०

श्री मानसजी :—

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई । जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होइ जाई ।।

श्री गीताजी :—

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योग मैश्वरम् ।।११।८

श्री मानसजी :—

श्रीगुरु पद नख मनिगन जोती । सुमिरत दिव्यदृष्टि हिय होती

श्री गीताजी :—

अनादि मध्यान्तमनन्त वीर्य-
मनंत बाहुं शशि सूर्य नेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्त हुताश वक्त्रं-
स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ।।११।१६

श्री मानसजी:—

आदि अन्त कोउ जासु न पावा । मति अनुमान निगम असगावा ।

श्री गीताजी :—

पितासि लोकस्य चराचरस्य-
त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो-
लोकत्रयेऽप्यप्रतिम प्रभाव ।।(११।४३)

श्री मानसजी :—

उमा राम सम हित जगमाँहीं । गुरु पितु मातु बन्धु प्रभु नाहीं

श्री गीताजी :—

भक्त्या त्वनन्ययाशक्य अहमेवं विधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ।।११।५४

श्री मानसजी :—

तुम्हरिहि कृपा तुम्हहिं रघुनन्दन । जानहिं भगत भगत उर चंदन ।।

श्री गीताजी :—

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः संग बर्जितः ।
निर्वैरः सर्व भूतेषु यः स मामेति पाण्डव ।।(११।५५)

श्री मानसजी :—

बहुत कहौं का कथा बढ़ाई । यहि आचरन बस्य मैं भाई ।।
बैर न बिग्रह आस न त्रासा । सुखमय ताहि सदा सब आसा
अनारंभ अनिकेत अमानी । अनघ अरोष दक्ष विज्ञानी ।।
प्रीति सदा सज्जन संसर्गा । तृन सम विषय स्वर्ग अपवर्गा ।।
भगति पक्ष हठ नहिं सठताई । दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ।।

मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह ।
ताकर सुख सोइ जानइ, परानन्द सन्दोह ।(उ०का०-४६)

श्री गीताजी :—

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योग वित्तमाः ।।(१२-१)

श्री मानसजी :—

ज्ञानहि भगतिहिं अन्तर केता । सकल कहहु प्रभु कृपानिकेता ।

श्री गीताजी :—

ये त्वक्षरमनिर्देश्यं अव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ।।(१२-३)
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूत हिते रताः ।
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ।।

श्री मानसजी :—

ज्ञान अगम प्रत्यूह अनेका । साधन कठिन न मन कहुँ टेका ।।
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ । भक्तिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ
कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन विवेक ।
होइ घुनाक्षर न्याय जो पुनि प्रत्यूह अनेक ।।
ज्ञान कै पंथ कृपान कै धारा । परत खगेश होइ नहिं बारा ।।

श्री गीताजी :—

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्य युक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्त तमा मताः ।।(१२-२)

श्री मानसजी :—

जौ परलोक इहाँ सुख चहहू । सुनि मम बचन हृदय हरि गहहू

सुलभ सुखदमारग यह भाई । भगति हमार पुरान श्रुति गाई

ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका । साधन कठिन न मन कहुँ टेका

सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि ।
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धान्त बिचारि ।।
जो चेतन कहुँ जड़ करइ जड़हिं करइ चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनायकहिं भजहिं जीव ते धन्य ।।

कहेउँ ज्ञान सिद्धान्त बुझाई, सुनहु भगति मनि कै प्रभुताई ।।
राम भगति चिन्तामनि सुन्दर, बसइ गरुड़ जाके उर अन्तर
परमप्रकास रूप दिन राती, नहिं कछु चहिय दियाघृत बाती
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा, लोभ वात नहिं ताहि बुझावा
प्रबल अबिद्या तम मिटि जाई । हारइ सकल सलभ समुदाई

श्री गीताजी :—

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्ण सुख दुःखेषु समः संग बिवर्जितः ।।(१२-१८)

श्री मानसजी:—

बन्दउँ सन्त समान चित हित अनहित नहिं कोइ ।
अँजलि गत शुभ सुमन जिमि सम सुगन्ध कर दोइ !!

श्री गीताजी :—

तुल्य निन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ।।

श्री मानसजी :—

निंदा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज ।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुनमन्दिर सुख पुन्ज ।।

श्री गीताजी :—

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोक्षि शिरो मुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ।।(१३/१३)

श्री मानसजी :—

बिस्वरूप रघुवंशमनि करहु बचन बिश्वास ।
लोक कल्पना वेदकर अंग-अंग प्रति जासु ।।

पग पाताल सीस अज धामा, अपर लोक अंग अंग बिश्रामा ।।
भृकुटि विलास भयंकर काला, नयन दिवाकर कच घनमाला
जासु घ्राण अश्विनी कुमारा, निशि अरु दिवस निमेष अपारा
श्रवन दिशा दस वेद बखानी, मारुत स्वाँस निगम निज बानी
अधर लोभ जम दसन कराला, माया हास बाहु दिग पाला ।।
आनन अनल अम्बुपति जीहा, उतपति पालन प्रलय समीहा ।।
रोम राजि अष्टादश भारा, अस्थि शैल सरिता नस जारा ।।
उदर उदधि अध गो जातना, जगमय प्रभु का बहु कल्पना ।।

अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान ।
मनुज वास सचराचर रूप राम भगवान ।।
अस विचारि सुनु प्रानपति प्रभु सन बयरु विहाइ ।
प्रीति करहु रघुबीरपद मम अहिबात न जाइ ।।

श्री गीताजी :—

मां च योऽव्यभिचारेण भक्ति योगेन सेवते ।

स गुणान्समतीत्यैतान् ब्रह्म भूयाय कल्पते ॥[१४।२६]

श्री मानसजी :—

भगति करत बिनु जतन प्रयासा, संसृति मूल अविद्या नासा ॥

भोजनकरिय तृपित हितलागी, जिमि सो असन पचवै जठरागी

श्री गीताजी :—

ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।

छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥[१५-१]

श्री मानसजी :—

अव्यक्तमूल मनादितरु त्वच चारि निगमागम भने ।

षट् कन्ध शाखा पंच वीस अनेक पर्ण सुमन घने ॥

श्री गीता जी :—

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ।

यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम् ॥[१५।६]

श्री मानस जी :—

तजि जोग पावक देह हरिपद लीन भइ जहँ नहिं फिरे ।

श्री गीता जी :—

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।

मनः षष्ठानोन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥

श्री मानस जी :—

ईश्वर अंश जीव अबिनाशी, चेतन अमल सहज सुखराशी !!

श्री गीता जी :—

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।

स सर्वविद्भजति माम् सर्व भावेन भारत ॥

श्री मानस जी :—

उमा राम सुभाव जेहिजाना, ताहि भजन तजि भाव न आना

श्री गीता जी :–

अभयं सत्व संसुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थितः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायश्तपआर्जवम् ।।
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ।।
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ।।१६।१-२-३

श्री मानस जी :–

संतनके लक्षन सुनु भ्राता, अगनित श्रुति पुरान विख्याता ।।
संत असंतन कै असि करनी, जिमि कुठार चंदन आचरनी।।
काटइ परशु मलय सुनु भाई, निज गुन देइ सुगन्ध बसाई ।।
ताते सुर सीसन्ह चढ़त जगवल्लभ श्रीखंड ।
अनल दाहि पीटत घनहिं परशु बदन यह दण्ड ।।
विषय अलंपट शील गुनाकर, पर दुख दुख सुख सुख देखे पर
सम अभूत रिपु विमद विरागी, लोभामरष हरष भय त्यागी
कोमलचित दीनन्ह पर दाया, मनक्रमबच मम भगति अमाया
सबहिं मानप्रद आपु अमानी, भरत प्रानप्रिय मम ते प्रानी ।।
विगतकाम मम नामपरायन, शान्ति विरति विनती मुदितायन
सीतलता सरलता मयत्री, द्विजपद प्रीति धर्म जनयत्री ।।
ये सब लच्छन बसहिं जासु उर, जानेहु तात संत संतत फुर
समदमनियम नीति नहिं डोलहिं, परुषबचन कबहूंनहिं बोलहिं

श्री गीता जी :–

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ।।१६।४

श्री मानस जी :–

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ, भूलेहु संगति करिय न काऊ ।।
संत असंतन्ह के गुन भाखे, ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे

श्री गीता जी :–

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभः तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।१६।८

श्री मानस जी :–

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ ।
सब परिहरि रघुबीरहिं भजहु भजहिं जेहिं सन्त !!

श्री गीता जी :–

विधिहीनमसृष्टान्नं मंत्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धा विरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते !!(१७/१३)

श्री मानस जी :–

तामस धर्म करहिं नर जप तप व्रत मख दान ।
देव न बरसहिं धरनी, बये न जामहिं धान ।।

श्री गीता जी :–

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञान विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम् ।।
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ।।
कृषि गोरक्ष्य वाणिज्यं वैश्य कर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापिस्वभावजम् । १८/४२,४३,४४

श्री मानस जी :—

देव एक गुन धनुष हमारे, नव गुन परम पुनीत तुम्हारे ॥
सोचिय विप्र जो वेदविहीना, तजि निज धर्म विषय लयलीना
सोचिय नृपति जो नीति न जाना, जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना
सोचिय बयस कृपण धनवानू, जो न अतिथि सिव भगत सुजानू
सोचिय शूद्र बिप्र अवमानी, मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी ॥

श्री गीता जी :—

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥

श्री मानस जी :—

विमल ज्ञान जल जब सो नहाई, तब रह राम भगति उर छाई

श्री गीता जी :—

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥ [१८/६१]

श्री मानस जी :—

नट मर्कट इव सबहिं नचावत, राम खगेस वेद असगावत ॥

श्री गीता जी :—

सर्वगुह्यतमं भूयः श्रृणु मे परमं वचः ।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥

श्री मानस जी :—

श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहाहीं, रघुपति भगति बिना सुख नाहीं

श्री गीता जी :—

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥

श्री मानस जी :—

रघुबंश भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं ॥

श्री गीता जी :—

नष्टोमोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।
स्थितोऽस्मि गत सन्देहः करिष्ये बचनं तव ॥

श्री मानस जी :—

मैं कृतकृत्य भइउँ अब तव प्रसाद बिस्वेस ।
उपजी राम भगति दृढ़ बीते सकल कलेश ॥

पुनः इस श्लोक में अर्जुन में ६ प्रकार की शरणागति पाई जाती है ।

१—'करिष्ये बचनं तव" :—में आनुकूलस्य संकल्पः है। अनुकूलता का स्वरूप यह है कि अपने इष्ट की जिस प्रकार प्रसन्नता हो वैसा ही करे । उन्हीं का होकर रहे । क्योंकि— "अग्या सम न सुसाहिब सेवा" ।

२— इसी से "प्रतिकूलस्य वर्जनम" भी होगा क्योंकि प्रतिकूलता का स्वरूप है-- जो प्रभु को अच्छा न लगे । वह न करे । त्याग दे । तो अर्जुन ने भी प्रभु की इच्छानुसार कायरता रूप दोष को त्याग दिया ।

३— 'गत सन्देहः" से "रक्षिष्यतीति विश्वासः" । क्योंकि सन्देह का नाश होता है तभी विश्वास होता है । सुग्रीव का जब सन्देह नाश हुआ तब विश्वास हुआ । "दुन्दुभि अस्थि ताल दिखराये । बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाये ।।" "देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती । बालि बधव इन्ह भइ परतीती ।।"

४:- "त्वत्प्रसादान्मयाच्युत" से "गोप्तृत्ववरणं" क्योंकि गोप्तृत्व का स्वरूप है अपने प्रभु को अपनी रक्षा के लिए वरण करना। सो कर रहे हैं .... आपकी कृपा से यह ज्ञान हुआ और आगे भी आप ही से सब कुछ कल्याण होगा।

५:- 'नष्टो मोहः' से 'कार्पण्यं' क्योंकि जब तक मोह रहता है तब तक अपने आत्म स्वरूप का ज्ञान नहीं हो पाता इसीलिये अपना अभिमान कहता है कि मैं भी कुछ हूँ। परन्तु मोह के नष्ट होने पर जीव अपने में नाचानुसंधान करने लगता है।

६:- 'स्थितोऽस्मि' से 'आत्म अर्पण' क्योंकि अपने को सम्यक् प्रकार से प्रभु को अर्पण कर देने पर ही स्थिति स्थिर हो पाती है। यथा — निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। और निज स्वरूप जीव का यही है कि सम्यक् प्रकारेण अपने इष्ट की सेवा में लग जाए। यथा:- सकल विधि कैंकर्य निपुणः जीव स्वरूपः ॥

इसीप्रकार श्री मानस जी में श्री भरतलाल जी में ६ वों प्रकार की शरणागति द्रष्टव्य है।

१— अनुकूलता का संकल्प- एकहि आँक इहइ मन माँहीं। प्रातकाल चलिहउँ प्रभु पाहीं ॥

२—प्रतिकूलता का त्याग:- जो हसि सो हसि मुँह मसि लाई। आँखि ओट उठि बैठहि जाई। सोक समाज राज केहि लेखे।

लखन राम सिय बिनु पग देखे ।। यहाँ से "वादि मोर सब विनु रघुराई ।" तक

३—रक्षा में विश्वास :—जद्यपि जनम कुमातु ते, मैं सठ सदा सदोष । आपन जानि न त्यागिहैं, मोहि रघुवीर भरोस ।।

४—गोप्तृत्व वरणं—अर्थात् अंगीकृत होना ।

जद्यपि मैं अनभल अपराधी । भै मोहि कारण सकल उपाधो ।।
तदपि सरन सनमुख मोहिं देखी । छमि सब करिहइँ कृपा बिशेषी ।।

५— आत्म निवेदन :—

पाहि नाथ कहि पाहि गुसाई । भूतल परे लकुट की नाई ।।

६— कार्पण्य—

क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी । नीच निसील निरीस निसंकी ।।

इसी प्रकार श्री विभीषण जी में भी षट शरणागति है ।

१— चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं । यह अनुकूलता का संकल्प है ।

२— मैं रघुबीर सरन अब जाहु देहु जनि खोरि । और अस कहि चला विभीषण जबहीं । यह प्रतिकूलता का त्याग है ।

३— शरण गये प्रभु ताहि न त्यागा, विश्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा ।। यह रक्षा में विश्वास है ।

४—श्रवण सुजस सुनि आयउँ, प्रभु भंजन भवभीर ।
त्राहि त्राहि आरति हरण, शरण सुखद रघुबीर ।।
यह गोप्तृत्व वरण यानी अंगीकार की प्रार्थना है ।

५— नाथ दशानन कर मैं भ्राता । निशिचर वंश जनम

सुर त्राता ।। सहज पाप प्रिय तामस देहा....यह कार्पण्यता है ।

६— अस कहि करत दण्डवत देखा...यह आत्म निक्षेप या समर्पण है ।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज ।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच ।।

अर्थ—सामान्य अर्थ तो यह है कि सब धर्मों को छोड़कर मेरी ही शरण को प्राप्त हो तुझे सब पापों से छुड़वा दूँगा ।

परन्तु इस अर्थ में विरोध पड़ता है क्योंकि जिस धर्म के लिये युग युग में अवतार लेते हैं । यथा—संभवाभि युगे युगे । उस धर्म को छोड़ने को क्यों कहेंगे । इसलिये आचार्यों ने ये अर्थ किये कि धर्म के फल को, कर्म की आसक्ति को त्यागकर शरण हो ।

दूसरा अर्थ यह है कि पूर्व जन्म जनित जो कुत्सित संस्कार रूप कर्म है अथवा उसका प्रायश्चित्त रूप चान्द्रायणादि व्रत रूप जो कर्म हैं उस धर्म को भी त्याग कर हमारी शरण में होओ, यह नहीं कि कुकृत्यों का प्रायश्चित्त कर लो तब शरण में हो सो भी बात नहीं, क्योंकि भगवद् शरण में होने से सर्व धर्मों का फल प्राप्त हो जाता है । यथा—'तरोमूल निषेचनेन' आदि भागवत में कहा गया है ।

तीसरा अर्थ यह है कि देवता आदि के पूजन रूप जो धर्म है वह सब देव पूजा रूप धर्म को छोड़कर हमारे शरण हो जाओ ।

चौथा अर्थ यह है जो भागवत धर्म के बिरोधी धर्म हैं अर्थात् जैसे कहा गया है कि—मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवोभव, अतिथि देवोभव। परन्तु वही माता, पिता, गुरू आदि यदि भगवद भजन में बाधा पहुँचाये तो उस धर्म को भी छोड़ करके शरण हो जाए। जैसे गोस्वामी जी कहते हैं :—

जाके प्रिय न राम बैदेही।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही।
तज्यो पिता प्रहलाद विभीषण वन्धु भरत महतारी ॥
बलि गुरु तज्यो कन्त ब्रज बनितन भय मुद मंगलकारी ॥

शरणागति भी ६ प्रकार की होती है।
आनुकूलस्य संकल्पः प्रातिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्यतीति विश्वासः गोप्तृत्व वरणं तथा।
आत्म निक्षेप कार्पण्यं षडविधा शरणागतिः ॥

शरण होने पर सब पापों से मुक्त करेंगे क्योंकि शरण में आने पर नहीं देखते कि वह बड़ा पापी है। यथा—

कोटि विप्र बध लागहिं जाहू। आये शरण तजहुं नहिं ताहू ॥
सकृदेव प्रपन्नाय .... आदि, पुनः—

क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी, नीच निसील निरीस निसंकी।
तेउ सुनि सरन सामुहें आए, सकृत प्रणाम किये अपनाये ॥
"शरणागति माखन है श्रुति की और कथा सब छाछ मही है।

जैसे वृक्ष के मूल के सींचने से सब साखा पल्लव हरे हो जाते हैं उसी प्रकार प्रभु की शरणागति से प्रभु प्रसन्न हो जाते हैं। और प्रभु के प्रसन्न होने से सब प्रसन्न हो जाते हैं।

"यथा तरोर्मूल निषेचनेन तृप्यन्ति तत्स्कंध भुजोपशाखाः।
प्राणोपहाराश्च यथेन्द्रियाणां तथैव सर्वार्हणमच्युतेज्या ॥"

श्री सीता स्तोत्रम्

श्रीमतः रामचन्द्रस्य चाद्याशक्तिस्वरूपिणी ।
जगत् सम्भवस्फोतो पुनः संहारकारिणी ।१।
सीते-सीते जपन्नित्यं प्रीतिविश्वासपूर्वकम् ।
प्रयासरहितं प्राप्येत दुर्लभं परमं पदम् ।२।
रामप्रिया दयारूपा जगन्मङ्गलकारिणी ।
नाशिनो ह्यघभारस्य स्वाश्रिताञ्जन रक्षिणी ।३।
परमानन्ददात्री च भक्त मानस रञ्जिनी ।
वायुपुत्रवरं दात्री दैत्यपुञ्जविमर्दिनी !४!
विदेहराज पुत्री च सर्वाघौघ विनाशिनी ।
पौरानाह्लाददात्री च नित्यं रामसुखप्रदा !५!
समस्त लोक सम्पूज्या मैथिली भूविहारिणी !
रामानुज महामान्या राघवचित्तापहारिणी !६!
अनन्तगुण संयुक्ता रामकृपा प्रसारिणी ।
सौन्दर्यानन्दरूपा च ह्यनन्तानंत रूपिणी !७!
ब्रह्माशंकरसम्पूज्या भवान्यादिभिर्सेविता ।
सकामसिद्धिदात्री च भक्तिमुक्तिप्रदायिनी !८!
अनन्तसुखसम्पन्ना मुनिमानसवासिनी ।
स्वत एव समुत्पन्ना शिवाद्याशोकनाशिनी !९!

राक्षसीभ्यो भयात् त्रात्री कल्याणी समरूपिणी ।
वन्देऽहं तव चरणं शरणं मातः प्रयच्छ मे !१०!
रत्नसिंहासनासीना रामवामाङ्ग शोभिता ।
किरीटचन्द्रिकायुक्ता ह्यंगप्रत्यंग शोभिता !११!
श्यामा दिव्यगुणैर्युक्ता नीलपीताम्बरावृता ।
श्रवणेकर्णपूरौ च महतीद्युतिधारिणी !!१२!!
अनन्तरतिसौन्दर्यमङ्गप्रत्यङ्गधारिणी ।
सकामं मंगला ध्यानं यथाकल्पतरुस्तथा !१३!
मणियुक्तश्चन्द्रहारोकण्ठे यस्य विराजते ।
चरणौ नूपुरैः युक्तौगन्धालंकार धारिणी !१४!
धनुर्बाणधरं रामं वन्दे सीतां विदेहजाम् ।
ब्रह्मानन्द स्वरूपां च ध्यानेचेष्टप्रदायिनीम् !१५!
अलकावलि च दृश्यन्ते भ्रमरावलि सन्निभा ।
लीलाकमलहस्ते च विद्युत्कान्तिश्च दृश्यते !१६!
निटिले चन्दनं मुक्ता भालेविन्दुशशिछविः ।
भ्रुवोऽनङ्गधनुं जैत्रा मुखज्योतिश्चचन्द्रजित ।१७।
चन्द्रकला चारुशीला सखीजन समावृताम् ।
सुभगासुलोचना सख्यौ व्यजमानाचशोभिताम् ।१८।

मृणालसदृशौ बाहू नानाभूषणशोभितौ ।
सर्वं कलिमलध्वंसी सर्वसौख्यप्रदायिनीम् ।१९।
गायत्रीवर्णसंबोध्याः साक्षाद्देवी सरस्वती ।
सीता विदेहतनया श्रुतिभिः गीयते सदा ।२०।
प्रेम्णा ध्यायति यो सीतां भुक्तिमुक्तिकरेस्थितः ।
रामप्रिया प्रसन्नाचेत् रामस्तस्य न दुर्लभः ।२१।

श्री राम स्तोत्रम्

रामं दाशरथिं वीरं कौशल्यानन्द वर्धनम् ।
जानकीजीवनं श्यामं नौमि भक्तार्तिहारिणम् ।१।
भक्तवात्सल्यसंयुक्तं दुष्टनिग्रहकारिणम् ।
मुनीशरञ्जनम् सत्यं जगत्पालनतत्परम् ।२।
सत्यसन्धं धनुष्पाणिं नवनीरज लोचनम् ।
ध्यात्वा यान्ति परां प्रीतिं आश्रितभावभाविताः ।३।
जगदुत्पत्ति कर्त्तारं समस्तजगदीश्वरम् ।
वन्दे दिव्यासनासीनं सर्वविश्वैककारणम् ।४।
भरतादिभिस्सेवितं विदेहतनयायुतम् ।
नानारत्न समाकीर्णं आसने शोभितं विभुम् ।५।
पुरवासिप्रियम् देवं हनुमद्हृदयवासिनम् ।
सखिभिर्वेष्टितं सौम्यं नमामि जगदीश्वरम् ।६।

अद्भुतक्रीडया नित्यं लोचनानन्ददायिनम् ।
ताटकादीनि संयुक्तं रक्षसंघं विनाशनम् ।७।
अहिल्योद्धारकं रामं मुनीनां रञ्जकं परम् ।
भवधनुर्भञ्जकञ्चैव भार्गवगर्वहारिणम् ।८।
वन्दे विभूतिपरमं भक्तमानसरञ्जकम् ।
यं ध्यात्वा मुच्यते मोहान्मानवैः भक्ति संयुतैः ।९।
शिरसापितुरादेशं धारयन् प्रविशद्वनम् ।
कृत्वाऽरूपां शूर्पणखां निहत्य खरदूषणम् ।१०।
लंकेश्वराय युद्धस्य संवादमदात्तथा ।
ततः मायामृगं हत्वा सीतान्वेषणतत्परः ।११।
ऋष्यमूकं समाविश्य दृष्टवान्नञ्जनीसुतम् ।
ततस्तेनैव वचसा सुग्रीवमग्निसाक्षिकम् ।१२।
मित्रं कृत्वाऽहनद्वीरः बालिनं बलशालिनम् ।
तस्य राज्ये च सुग्रीवं अभिषिच्य महामतिः ।१३।
सुग्रीवसचिवं दूतं हनुमन्तंव्यसर्जयत् ।
स वीरो राघवादेशं प्राप्य लङ्कापुरं ययौ ।१४।
आगत्य श्रावयामास सीतासन्देशमुत्तमम् ।
ततः वानरसंघेन सेतुंकृत्वा पयोनिधौ ।१५।

रामोहिगतवान् लङ्कां हन्तुं रावणमाहवे ।
पुत्रपौत्रादिभिर्युक्तं हत्वा दत्वा निजालयम् ।१६।
लङ्कां विभीषणं दत्वा आरुह्य पुष्पकं ततः ।
अयोध्यामागतोबीरः राज्यं च पितुराप्तवान् ।१७।
धर्मं च पालयामास पृथ्वीमत्यपालयन् ।
सर्वे वर्णाश्रमा एव सुखिनस्तु तदा जनाः ।१८।
वाजिमेधसहस्राणि कृत्वादानं द्विजालये ।
दत्वाधाममगाद् रामो प्राणिभिः सहचानघः ।१९।
इदं रामस्य चरितं ये पठन्ति च सादरम् ।
भुक्तिं मुक्तिं तथा भक्तिं प्राप्स्यन्ति परमं पदम् ।२०।

श्रीकृष्ण चरित्र

यशोदानन्दनं श्यामं नन्दानन्द प्रदायिनम् ।
व्रजे वृन्दावने वासं गोपिका हृद्विहारिणम् ।।१
पूतनावधकर्तारं यमलौ गतिदायकम् ।
धेनुकाद्याहतो रामः कृष्णश्शकटनाशकः ।।२
दधिनवनीतहरश्चैव गोपीजनरञ्जकः ।
सखिभिः कन्दुकक्रीडे कालीयमदमर्दकः ।।३
गोपी दुकूलहरणंरास मण्डल मण्डनम् ।
मुष्टि चाणूरहननं कुब्जावाञ्छाप्रपूर्णकम् ।।४
गजेन्द्रमर्दनं श्यामं कंस संहारकारकम् ।
वन्देऽहं द्वारिकाधीशं पाण्डवांश्चैव पालकम् ।।५

गोवर्धनधरं श्यामं वेणुवादन तत्परम् ।
सुदामादुःखहर्तारं दत्त्वा च परमंधनम् ॥६
देवकी पुत्रमादाय पुत्रशोकविनाशकम् ।
शिशुपालादि खलान्हत्वा दत्त्वातान्परमांगतिम् ॥७
द्रौपदीवस्त्रदातारं दीनभक्तप्रपालकम् ।
पाण्डवान् विजयंदत्त्वा कुन्तीवाञ्छाप्रपूरकम् ॥८
तृणावर्तप्रलम्बादिदुष्टराक्षस नाशकम् ।
याज्ञिक विप्रभार्यायःदत्तं भुक्तं च भोजनम् ॥९

(१)

रामकृष्ण अवतार अनूपम वेद पुराण पुकारे ।
राम जन्म दशरथ गृह लीन्हें, नन्दगृह कृष्ण पधारे ।
कौशिल्या दशरथ सुख दीन्हें यशुमति कृष्ण दुलारे ।
रामलला ताड़का संहारे, पूतना कृष्ण उधारे ।
रामचन्द्र रावण को मारे, कंस को कृष्ण पछारे ।
रामकमल कर धनुष विराजे, यदुपति बंशी धारे ।
रामप्रिया श्री जनकनन्दिनी राधिका श्याम बिठारे ।
राम गंग सरयू जल निर्मल, कृष्ण जमुनजल धारे ।
सागर सेतु किये रघुनन्दन, कृष्ण गोवर्द्धन धारे ।
राजाराम अवध रजधानी, द्वारिका कृष्ण संभारे ।
जन सुखराम आराम जगत के, दोऊ अगम अपारे ।

(२)

रामकृष्ण दोउ नाम सुहावन, पावन मनभावत अति मोरे।
यही नाम को जपें निरन्तर, ब्रह्मा शिव अरु शेष करोरे।
उत्तम पद शोभित ब्रह्माण्डन, पाए बहु-विधि सुयश घनेरे।
नाम युगल को जपे हमेशा, शुक सनकादि उदासी।
जीवन मुक्त होय विचरे शुचि, जनम मरण छुटि फांसी।
"जन सुखराम" कहाँ लगि वरनै, महिमा अगम अपारे।
जो चाहे कल्याण आपनों, नाम कबहुँ न विसारे।

(३)

रामकृष्ण दोउ रूप मनोहर धर लो उरमें अचल धरोहर।
प्रकट भये श्रीराम अवधपुर, प्रकटे श्याम सुभग मथुरापुर।
क्रीडत गोद कौशिल्यहि राम, यशोदा लाड लड़ावत श्याम।
अवध महँ खेलत रामलला, वृन्दाबन विहरत नंदलला।
मज्जहिं सरयू महँ श्रीराम, यमुना स्नान करत घनश्याम।
रामसखा कपि भालु बनाये, कृष्णको ग्वालबाल मनभाये।
रामविनोद सखन्ह संग कीन्हें, कृष्ण गोपियन महँ चित्त दीन्हें।

[४]

रामकृष्ण दोउ चरित मनोहर, गावत जन सुखकारी।
रसमय चरित सुरसना गावत, मेटत अघ अति भारी।
भक्त जनन के सरवस प्राणधन, पावत सुख अति भारी।
'जनसुखराम' के प्रिय दोउ सम, बार-बार बलिहारी।

[५]

रामकृष्ण करधाम सुपावन, ध्यावत ब्रह्मा शिव मुनि ज्ञानी।
वास करत सब सिद्ध संत जन, महिमा वेद बखानी।
सरित पुनीत यहैं दोउ पुर, सरयू यमुना रानी।
कथा संतजन कहहिं निरन्तर, सुनहिं सकल मन लाई।
प्रेमीजन मिलि कीर्तन करहीं, नित नव मंगल दाई।
बरहों मास रहे बहु उत्सव, बाजत सदा बधाई।
"जनसुखराम" दोउन पुर महिमा, कवनजनत कहैं गाई।

[६]

रसिक सिरमौर चित चोर कौशल किशोर,
राम घनश्याम श्री सुषमा के सदन हैं।
कौशिल्या के प्यारे दुलारे श्री दशरथ जू के,
भक्तन के प्राण अधारे करुणा के भवन हैं।
लखन भरत जू भ्राता सुखदाता सकल के,
संतन के सरबस जीवन प्राण धन हैं।
जनसुखराम कहें ऐसे श्रीरामचन्द्र,
तिनके प्रिया जानकी के सुन्दर कनकभवन हैं।

[७]

करुणा निधान सुजान श्री रामभद्र,
दया के सागर उजागर त्रिभुवन में।
रावण को मारे उतारे भार भूमी के,
सकल सुख साजे सुरन्ह सब संतन में।

जनक की दुलारी प्यारी श्रीराम जी की,
श्रेष्ठ सबही से इन्दिरा इन्द्रानिन में ।
जन सुखराम कहें ऐसे श्री सीताराम,
विराजे ही सदा सुन्दर कनक भवन में ।

[८]

यशोदा के दुलारे प्राणप्यारे श्रीनन्द जू के,
गोपी सरबस गोप सखा के धन हैं ।
वृन्दावन भूषण की अदूषण लीला सब,
विहारी संतत कुंज अरु निकुन्जन के ।
द्वारिकाधीश ईश सारे जगत के,
पालक भक्त भीषमपितामह के पन के ।
जनसुखराम कहें ऐसे श्रीकृष्णचंद्र,
प्रिया श्रीरुक्मिणी के सुन्दर शुभसदन हैं ।

[९]

आरती रास बिहारी की,
लली वृषभान दुलारी की ।
माथ पर मोर मुकुट राजे,
चन्द्रिका राधे सिर भ्राजे ।
सुनख शिख भूषण सब साजे,
अधर पर वंशी धारी की ।। टेक
नीलवर पीत बसन सोहैं,
बजत वंशी सब मन मोहैं ।

सुगोपी जन मन हारी की ।। टेक ।।
अनूपम छवि दोऊ पिय प्यारी,
लजत रति पति युत निजनारी ।
नटत गोपीं हो मतवारी ।
आरती रास बिहारी, की,
लली वृषभान दुलारी की ।

[१०]

आरती अवध बिहारी की,
जनकजा श्री सिय प्यारी की ।
शीश पर क्रीट चन्द्रिका राजै,
केशर तिलक भाल पर भ्राजै ।
कर्ण में कुण्डल छवि छाजै,
सुनाशा मणि दुतिकारी की ।।टेक ।।
सुमुख पर अलकावलि लटके,
हृदय पर मणिमाला चमके ।
सुकटि पर करधनि अति दमके,
पीताम्बर रवि दुति हारी की ।। टेक ।।
पायँ में पैंजनि अधिक सुहाय,
रहे जहाँ मुनिमन सदा लुभाय ।
छुअत सब पातक पुञ्ज नशाय,
स्नेह निधी बलिहारी की । टेक ।।

शुद्धि पत्र

पृष्ठ सं भू०	अशुद्ध	शुद्ध
३	महात्मानां	हरितव्र
५	भानित	भनित
पुस्तक ९	४-१६-७	३-१६-७
१६	छिपती है	छिपाती है
१९	कहने लगे	कहते रह गये
१६	वहै देव	कहै देव
२७	देवैं	देखैं
२८	प्रेमप्रिय	प्राण प्रिय
३०	गगापार	गंगापार
५१	मत	भक्त
५४	स्नेह	अस्नेह
४५	स्फीती	स्थिति
४७	गावत्री	गायत्री

बालोतरा निवासी म०हरीदासजी महाराज की प्रेरणा से उनके कृपापात्र शिष्य श्री राघोदास जी ने प्रकाशन में व्यय होने वाले द्रव्य की सेवा करने का बचन दिया एवं श्री रामदास जी मौर्य ने कागज एवं ब्लाक बनवाने में सहयोग दिया अतः मैं इन सभी सन्तों का आभारी हूं।

—स्वामी सुखरामदास जी रामायणी

पुस्तक प्राप्ति का स्थान :—

मानस धार्मिक पुस्तक भण्डार

वासुदेवघाट, श्री अयोध्या जी, फैजाबाद

प्रस्तुत ग्रन्थ में श्रीमद्‌भगवत गीता एवं श्री रामायण जी का समन्वय किया गया है यह दोनों ग्रन्थ अनुपम हैं। इनका पठन पाठन मनन करना जीव मात्र को कल्याण प्रदायक है अतः आशा है कि इसको पढ़ने वालों एवं मनन कर आचरण में लाने वालों पर प्रभु विशेष कृपा करेंगे।

दो०—सब साधन कर एक फल, जेहि जानेउ सोइ जान।
ज्यों त्यों मन मन्दिर बसैं, राम धरे धनु बान॥

—स्वामी सुखरामदास जी रामायणी

स्वामी जी के प्रकाशित ग्रन्थों की सूची

(१) श्री हनुमत चरितामृत
(२) श्री गीता रामायण समन्वय

पुस्तक प्राप्ति का स्थान :—

मानस धार्मिक पुस्तक भन्डार

वासुदेवघाट, श्री अयोध्या जी, फैजाबाद

मुद्रक :—
हर्षण प्रेस, स्वर्ग द्वार, श्री अयोध्या जी